दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय सुरक्षित: 23.02.2024

निर्णय उद्घोषित: 12.03.2024

<u>कि.नि.पु. 160/2018 और सि.वि. आ. 15875/2018, 50183/2019 और 1452/2024</u>

गोपाल कृष्ण .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

<u>कि.नि.पु. 180/2018 और सि.वि.</u> आ. **<u>17564/2018, 50184/2019 और 1450/2024</u>**

तारा चंद .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा : श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

<u>कि.नि.पु. 569/2018 और सि.वि. आ. 50112/2018, 50113/2018 और 1453/2024</u>

गुरु दर्शन महेंद्रू ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

<u>कि.नि.पु. 570/2018 और सि.वि. आ. 50188/2018, 50190/2018 और 1455/2024</u>

गुरु दर्शन महेंद्रू .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

<u>कि.नि.पु. 571/2018 और सि.वि. आ. 50194/2018, 50195/2018 और 1454/2024</u>

गुरु दर्शन महेंद्रू .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य .....प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

<u>कि.नि.पु. 572/2018 और सि.वि.आ. 50197/2018, 50198/2018 और 1451/2024</u>

गुरु दर्शन महेंद्रू ..... याचिकाकर्ता

द्वारा : श्री राम भक्त अग्रवाल, अधिवक्ता

बनाम

विजय कुमार अग्रवाल और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री राजेश कात्याल, अधिवक्ता

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री गिरीश कठपालिया

<u>न्या. गिरीश कठपालिया,</u>

<u>कि.नि.पु. 160/2018 में सि.वि.आ. 1452/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और सि.वि.आ. 50183/2019 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ)</u>

<u>कि.नि.पु. 180/2018 में सि.वि.आ. 1450/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और सि.वि.आ. 50184/2019 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ)</u>

<u>कि.नि.पु. 569/2018 में सि.वि.आ. 1453/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और</u>

<u>सि.वि.आ. 50113/2018 (अतिरिक्त दस्तावेज)</u>

<u>कि.नि.पु. 570/2018 में सि.वि.आ. 1455/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और सि.वि.आ. 50190/2018 (अतिरिक्त दस्तावेज)</u>

<u>कि.नि.पु. 571/2018 में सि.वि. आ. 1454/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और सि.वि.आ. 50195/2018 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ)</u>

<u>कि.नि.पु. 572/2018 में सि.वि. आ. 1451/2024 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ) और सि.वि. आ. 50198/2018 (पश्चात्वर्ती घटनाएँ)</u>

1. दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत इन याचिकाओं में याचिकाकर्ताओं (किरायेदारों) की ओर से दायर ये आवेदन समान तथ्यात्मक और विधिक मैट्रिक्स पर आधारित हैं, इसलिए इन्हें एक साथ लिया गया है। मैंने दोनों पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

2. संक्षिप्त और स्पष्ट रूप में कहा जाय, इन आवेदनों के न्यायनिर्णयन के लिए प्रासंगिक परिस्थितियां इस प्रकार हैं।

2.1 किरायेदारों द्वारा अतिरिक्त किराया नियंत्रक के आदेशों को चुनौती देने के लिए मुख्य पुनरीक्षण याचिकाएं दायर की गई हैं, जिसके तहत अधिनियम की धारा 14(1)(ङ) के तहत बेदखली की कार्यवाही को चुनौती देने की अनुमति को अस्वीकार कर दिया गया था और इसके परिणामस्वरूप, बेदखली आदेश पारित किया गया था। इन सभी मामलों में, प्रारंभिक सुनवाई के बाद, पूर्ववर्ती पीठ द्वारा आक्षेपित बेदखली आदेशों के संचालन पर रोक लगा दी गई थी।

2.2 पुनरीक्षण याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ताओं/किरायेदारों ने ये 12 आवेदन दायर किए, जिनमें इन पुनरीक्षण याचिकाओं में आक्षेपित

बेदखली आदेशों के पारित होने के बाद कथित रूप से हुई घटनाओं का खुलासा करने के लिए अतिरिक्त प्रस्तुतियाँ/दस्तावेज अभिलेख पर रखने की अनुमति मांगी गई थी। आवेदनकर्ताओं द्वारा कथित पश्चात्वर्ती घटनाओं में यह कहा गया है कि आक्षेपित बेदखली आदेशों के पारित होने के बाद, प्रत्यर्थी/मकान मालिकों (*यहाँ अनावेदकों) ने बड़े परिसर (जिसका विषयगत परिसर हिस्सा है)* की कुछ दुकानों के खाली मकान पर कब्ज़ा कर लिया और उन्होंने उसमें नए किरायेदारों को रखा, जिसने यथोचित उपयुक्त वैकल्पिक जगह की उपलब्धता के कारण वास्तविक आवश्यकता के उनके दावे को समाप्त कर दिया है।

2.3 बेदखली याचिकाएं, जिनसे वर्तमान पुनरीक्षण कार्यवाही उत्पन्न हुई है, भवन संख्या 10240-10244 और 10248, विजय चैम्बर्स, लाइब्रेरी रोड, आज़ाद मार्केट, दिल्ली (इसके बाद "बड़ा परिसर" के रूप में संदर्भित) में भूतल की दुकान संख्या 17, 18, 19, 40, 41 और 45 (इसके बाद "विषयगत परिसर" के रूप में संदर्भित) से संबंधित हैं। उक्त बेदखली याचिकाओं में, वर्तमान अनावेदकों ने अभिवाक किया कि उन्हें वास्तविक रूप से विषयगत परिसर की आवश्यकता है क्योंकि बड़े परिसर में उनके कब्जे में जगह की कमी के कारण, उन्हें अपने सामान को अपनी दुकानों के बाहर और गलियारों में रखना पड़ता है, जिन्हें गुणवत्ता, दर, वजन, सामग्री संरचना और आकार आदि, के अनुसार वर्गीकृत / अलग-अलग करके माल का भंडारण किया जाना आवश्यक है, और लगभग 4000 बंडल भारी जलरोधक के कैनवास को ट्रक द्वारा पहुंचने योग्य

सड़क के पास की दुकानों में संग्रहीत किया जाना आवश्यक है ताकि उन्हें आसानी से लदाई/उतारा जा सके, और उस उद्देश्य के लिए विषयगत परिसर सबसे उपयुक्त है।

2.4 जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, बेदखली की कार्यवाही को चुनौती देने की अनुमति मांगने वाले किरायेदारों (*यहां आवेदनकर्ताओं*) द्वारा दायर आवेदनों को खारिज कर दिया गया था और उन बेदखली आदेशों को चुनौती देने वाली वर्तमान पुनरीक्षण याचिकाओं में, विचाराधीन आवेदन दायर किए गए हैं।

2.5 इन आवेदनों का एक सेट दुकान संख्या 44, 48 और 49 के अधिग्रहण के संबंध में है, जबकि दूसरा सेट बड़े परिसर की दुकान संख्या 2, 3, 24ए, 31, 54 और 58 के अधिग्रहण के संबंध में है। इन सभी आवेदनों में, आवेदनकर्ताओं द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि उक्त नौ खाली दुकानों के खाली मकान का कब्ज़ा करने के बाद, अनावेदकों ने उन दुकानों में नए किरायेदारों को रखा, जो यह भी दर्शाता है कि बेदखली याचिकाओं में उनके द्वारा अनुमानित आवश्यकता *वास्तविक* नहीं थी। अनावेदकों द्वारा इन आवेदनों का इस आधार पर कड़ा विरोध किया गया कि आक्षेपित बेदखली आदेशों के संचालन पर रोक प्राप्त करने के बाद, आवेदक ऐसे आवेदनों के द्वारा कार्यवाही को लंबा खींच रहे हैं और आवेदनकर्ताओं द्वारा कथित रूप से

ऐसी कोई भी घटना अभिलेख पर नहीं रखी जा सकती है क्योंकि इससे न्यायालय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, विशेष रूप से 100 से अधिक दुकानों वाले बड़े परिसर में, कुछ या अन्य दुकानें खाली होती रहेंगी, लेकिन जरूरी नहीं कि वह अनावेदक के लिए उपयोग की हो क्योंकि उन्हें बड़े परिसर के भूतल पर मुख्य सड़क के पास दुकानों की आवश्यकता होती है।

3. इन आवेदनों पर बहस के दौरान, आवेदनकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि बड़े परिसर में 150 दुकानों में से लगभग 120 अब या तो अनावेदकों के कब्जे में हैं या खाली होने के बाद उन्हें फिर से किराए पर दे दिया गया है, यह वर्तमान पुनरीक्षण याचिकाओं के निपटान होने तक कथित वास्तविक आवश्यकता की निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए एक प्रासंगिक कारक होगा। दूसरी ओर, अनावेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि दुकानों की कथित खाली करने की ऐसी घटनाओं के बाद इन पुनरीक्षण कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान उन्हें कथित रूप से फिर से किराए पर देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि आक्षेपित बेदखली आदेशों के संचालन पर रोक प्राप्त करने के बाद, आवेदकों का उद्देश्य पश्चात्वर्ती घटनाओं के नाम पर इन कार्यवाही को हमेशा के लिए रोकना है।

4. दोनों पक्षकारगण के विद्वान अधिवक्ताओं ने अपने-अपने संबंधित तर्कों के समर्थन में इसके बाद चर्चा की गई कुछ न्यायिक नजीरों का उल्लेख किया।

मूल रूप से, किरायेदारों/आवेदनकर्ताओं के अनुसार, *वास्तविक* आवश्यकता को अंतिम न्यायनिर्धारक अधिकरण द्वारा बेदखली विवाद के अंतिम निपटान होने तक जारी रखना होता है, जबकि मकान मालिकों/अनावेदकों के अनुसार, *वास्तविक* आवश्यकता की जांच केवल बेदखली याचिकाओं के संस्थित होने की तारीख पर ही किया जाना चाहिए।

5. जांच किए जाने वाला प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान प्रकृति के मुकदमों में, मुकदमा के पक्षकारगण के अधिकार और दायित्व वाद के संस्थित होने की तारीख पर रोक दी जाती है या वह न केवल प्रथम न्यायनिर्णयन न्यायालय द्वारा बल्कि प्रत्येक वरिष्ठ न्यायालय से उच्चतम न्यायालय तक, के द्वारा अंतिम निपटान होने तक उद्विकासी होते और बदलते रहते हैं। अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत लगभग हर कार्यवाही में इस न्यायालय के समक्ष यह सवाल आता है, जहां किरायेदार को बेदखली आदेश के खिलाफ अंतरिम संरक्षण दिया जाता है। और यह प्रश्न लगभग हमेशा किरायेदार के आवेदन (ओं) के रूप में आता है जो अतिरिक्त प्रस्तुतियों और/या दस्तावेजों को अभिलेख पर रखने की अनुमति के लिए होता है जिसमें तर्क दिया जाता है कि उन्हीं घटनाओं को दिखाएगा जो बेदखली आदेश के पारित होने के बाद हुई थीं। कई बार, बेदखली आदेश के खिलाफ अंतरिम संरक्षण का उपयोग करने वाले किरायेदार पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर रखने के लिए कई क्रमिक आवेदनों के साथ आते हैं, यह दावा करते हुए कि वाद शीर्षक ***हसमत राय और***

अन्य बनाम रघुनाथ प्रसाद, (1981) 3 एस.सी.सी. 103 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह आदेश दिया कि उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण कार्यवाही और यहां तक कि उच्चतम न्यायालय के समक्ष पश्चात्वर्ती कार्यवाही के निपटान होने तक, उन घटनाओं को किरायेदार द्वारा इस आधार पर अभिलेख पर दर्ज करने की मांग की गई कि वे घटनाएं, हालांकि किराया नियंत्रक द्वारा बेदखली याचिका के निपटान के बाद हुईं, अगर उक्त घटनाओं का अंतिम परिणाम पर असर पड़ता है, तो उन्हें अभिलेख पर लिया जाना चाहिए।

6. मोटे तौर पर, विभिन्न उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय से प्रवाहित, न्यायिक नजीरों की दो श्रेणियाँ हैं - एक ***हसमत राय*** इतरोक्ति का सख्ती से पालन करते हुए पश्चातवर्ती घटनाओं को रिकॉर्ड में लेने के पक्ष में है, और दूसरा अलग प्रकार से अभिनिर्धारित करती है। इसलिए, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत प्रावधानों की विशिष्ट पृष्ठभूमि में इस पहलू पर प्रासंगिक न्यायिक नजीरों के द्वारा विस्तृत विचार-विमर्श की आवश्यकता है।

7. शुरुआत में, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की विशिष्ट सामग्री को ध्यान में रखते हुए, अन्य समान किराया नियंत्रण कानूनों से अलग, अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत लाए गए इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के दायरे पर ध्यान देना उचित होगा।

7.1 वर्ष 1976 में संशोधन के द्वारा अध्याय IIIक को दिनांक 01-12-1975 से भूतलक्षी प्रभाव से दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में अंतःस्थापित किया गया था, जिसमें बेदखली के दावों से संबंधित संक्षिप्त विचारण अधिकांशतः उन स्थितियों से संबंधित थे जहां मकान मालिक को किरायेदार वाले जगह की *वास्तविक* आवश्यकता थी। ऐसी ही एक स्थिति अधिनियम की धारा 14(1)(ङ) के रूप में पहले से ही विधि की पुस्तक में थी और धारा 14क के रूप में वर्ष 1976 के संशोधन द्वारा एक और ऐसी स्थिति जोड़ी गई थी। इसके बाद, वर्ष 1988 में किए गए संशोधन ने अधिनियम की धारा 14घ में धारा 14ख के रूप में ऐसी और स्थितियों को जोड़ा। अध्याय IIIक की व्यापक योजना किरायेदार को अधिकार के रूप में उन विशिष्ट स्थितियों की बेदखली कार्यवाही का विरोध करने से रोकती है, जब तक कि किरायेदार नियंत्रक से विरोध करने की अनुमति न प्राप्त कर ले; और यदि अनुमति अस्वीकार कर दी जाती है, तो बेदखली आदेश का आवश्यक रूप से पालन किया जाएगा। पूरी अवधारणा यह है कि मकान मालिक जिसे किरायेदार परिसर की आवश्यकता है, उसे लंबे समय तक बेदखली की प्रतीक्षा से परेशान नहीं किया जाना चाहिए, हालांकि साथ ही, किरायेदार को भी बिना इस तरह की सिविल कार्यवाही में खुद का बचाव करने का प्रभावी अवसर दिए बिना किसी अन्य सिविल परिणाम की तरह बेदखली के अधीन नहीं किया जाना चाहिए। न्यायालय को सावधानीपूर्वक और विवेकपूर्ण तरीके से मकान मालिक के संक्षिप्त कार्यवाही के द्वारा बेदखल करने

के अधिकार और किरायेदार के सामाजिक कल्याण छत्र के तहत किरायेदारी जारी रखने के अधिकार के बीच संतुलन बनाना होगा।

7.2 प्रतिवाद करने के लिए अनुमति मांगने के चरण में, यदि किरायेदार ऐसे तथ्यों का खुलासा करके मामला बनाता है जो मकान मालिक को बेदखली आदेश प्राप्त करने से वंचित कर दें, तो यह पर्याप्त है। प्रतिवाद करने के लिए अनुमति मांगने के चरण में, किरायेदार को ऐसा मजबूत मामला स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है जो मकान मालिक के दावा को ख़ारिज करे। प्रतिवाद करने के लिए अनुमति मांगने के चरण में, लागू किया जाने वाला जांच यह है कि क्या किरायेदार के शपथ-पत्र में प्रकट किए गए तथ्य *प्रथम दृष्टया* दर्शाते हैं कि मकान मालिक बेदखली आदेश प्राप्त करने से वंचित हो जाएगा और यह नहीं कि बचाव पक्ष अंत में विफल हो सकता है। साथ ही, न्यायालय को यह भी सचेत रहना होगा कि केवल पूछने या नियमित तरीके से प्रतिवाद करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, क्योंकि यह अधिनियम के अध्याय IIIक के पीछे के उद्देश्य को विफल कर देगा। यह तभी संभव है जब किरायेदार द्वारा चुनौती देने की अनुमति मांगने वाले आवेदन में उठाए गए अभिवाक और दलील एक विचारणीय मुद्दा बन जाते हैं और तथ्यों पर विवाद की मांग करती है कि गवाहों की प्रति-परीक्षा के द्वारा सच्चाई का पता लगाने के बाद मामले का उचित तरीके से न्यायनिर्णयन किया जाए, तभी चुनौती देने की अनुमति दी जानी चाहिए। प्रत्येक मामले का निर्णय उसके गुणागुण के आधार पर किया

जाना चाहिए न कि किसी सामान्यीकृत अनुमान के आधार पर। न्यायालय ऐसी स्थिति को भी नजरअंदाज नहीं कर सकता है, जहां किरायेदार द्वारा संस्थित मामला कार्यवाही को लंबा खींचने के एकमात्र उद्देश्य से संस्थित किया गया हो, ताकि मकान मालिक हताश होकर हार मान ले, जिससे कानून की प्रक्रिया भी विफल हो जाय। जहां किरायेदार प्रतिवाद करने की अनुमति मांगता है, कुछ भी और सब कुछ का अभिवचन करता है, हवा से बाहर निकालता है और *प्रथम दृष्टया* मामला उठाने का दावा करता है, तो न्यायालय का कर्तव्य है कि वह अंतरालेखन को पढ़े, ताकि पक्षकारगण को न्याय सुनिश्चित हो और साथ ही विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया भी सुनिश्चित हो।

7.3 विशेष रूप से, अधिनियम की धारा 25ख की उप-धारा (8) के तहत प्रावधान किरायेदार परिसर के कब्जे की पुनःप्राप्ति के लिए धारा 25ख के तहत निर्धारित संक्षिप्त प्रक्रिया के अनुसार किराया नियंत्रक द्वारा पारित आदेश की किसी भी अपीली जांच पर पूर्ण प्रतिबंध लगाता है। अंतर्निहित सिद्धांत मकान मालिक को शीघ्र उपाय सुनिश्चित कराना है, जिसे किरायेदार परिसर की वास्तविक आवश्यकता है। यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि सीमित तरीके से जांच के दायरे को हटाने के लिए अधिनियम की धारा 25ख(8) में अधिनियमित परंतुक को इस तरह से समझा और उपयोग किया जाना चाहिए कि यह कुछ विशिष्ट प्रकार के मामलों में त्वरित उपाय के विधायी आशय को नकारता नहीं हो।

7.4 अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक की सावधानीपूर्वक जांच से पता चलता है कि यह विशेष रूप से "संशोधन" शब्द का उपयोग नहीं करता है। लेकिन प्रावधान को संपूर्णता में पढ़ने से पता चलता है कि उक्त परंतुक के तहत प्रदत्त शक्ति पुनरीक्षण शक्ति है, जो अपीली शक्ति से पूरी तरह अलग है, इस अर्थ में कि अपीली शक्ति इतनी व्यापक है कि अपील न्यायालय पूरे मामले की जांच कर सकती है और नए निष्कर्ष पर पहुंच सकती है, जबकि पुनरीक्षण शक्ति अधीक्षण और पर्यवेक्षण तक ही सीमित है जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि अधीनस्थ न्यायालय और अधिकरण कानून की सीमाओं के भीतर काम करें। यह सामान्य बात है कि अधिनियम की धारा 25ख(8) के परन्तुक द्वारा उच्च न्यायालय को प्रदत्त पुनरीक्षण की शक्ति, विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुपालन सहित निर्णय लेने की प्रक्रिया पर प्रथम न्यायनिर्णयन के न्यायालय पर अधीक्षण की प्रकृति की होने के कारण, उच्च न्यायालय की अपीली जांच के मापदंडों का प्रयोग करके प्रथम न्यायनिर्णयन के न्यायालय के विचार पर अपना दृष्टिकोण प्रतिस्थापित और हटा नहीं सकता है। उच्च न्यायालय की भूमिका केवल अपनाई गई प्रक्रिया पर स्वयं को संतुष्ट करने की सीमा तक ही होती है। इस तरह की कार्यवाही में उच्च न्यायालय के लिए किराया नियंत्रक द्वारा दर्ज किए गए तथ्य से अलग तथ्य के निष्कर्ष स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि किराया नियंत्रक द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्ष इतने अनुचित न हो कि कोई किराया नियंत्रक उपलब्ध सामग्री पर इसे

दर्ज नहीं करेगा। इस तरह की कार्यवाही में उच्च न्यायालय किराया नियंत्रक के आदेश को इस प्रश्न की कसौटी पर जांच करने के लिए बाध्य है कि क्या यह विधि के अनुसार है या ऐसा है कि वस्तुनिष्ठता के साथ कार्य करने वाला कोई भी उचित व्यक्ति उपलब्ध सामग्री तक नहीं पहुंच सकता था।

7.5 पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर लेने के मुद्दे पर न्यायिक उदाहरणों को ऊपर उल्लिखित विधिक स्थिति से बाहर नहीं पढ़ा जा सकता है।

8. अब, आवेदनकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा अपने दावे के समर्थन में उद्धृत न्यायिक निर्णयों के द्वारा संक्षेप में पता लगाना उचित होगा कि पश्चात्वर्ती घटनाओं, यदि अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान अभिवाक दी गई है, तो अनिवार्य रूप से अभिलेख पर लिया जाना चाहिए और यह पता लगाते समय जांच की जानी चाहिए कि क्या मकान मालिक द्वारा अनुमानित वास्तविक आवश्यकता अस्तित्व में है।

8.1 ***हसमत राय*** (पूर्वोक्त) के मामले में, आवेदनकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया, उच्चतम न्यायालय ने पश्चात्वर्ती घटनाओं की प्रारंभिक मुद्दे की जांच की और इस प्रकार निर्धारित किया:

> "14.....*इसलिए, जब मकान मालिक द्वारा व्यक्तिगत आवश्यकता के आधार पर बेदखली के लिए किराया प्रतिबंध*

> *अधिनियम के तहत कोई कार्रवाई की जाती है, तो उसकी आवश्यकता को न केवल वाद की तारीख में मौजूद दिखाया जाना चाहिए, बल्कि अपीली डिक्री की तारीख पर मौजूद होना चाहिए, या उस तारीख को जब कोई उच्चतर न्यायालय मामले का निपटान करता है। न्यायालय से न्यायालय में कार्यवाही की प्रगति और पारित होने के दौरान यदि पश्चात्वर्ती घटनाएं होती हैं, जो अगर ध्यान में आती हैं, तो वादी के दावे को ख़ारिज करेंगी,* तो *न्यायालय को उसकी जांच और मूल्यांकन करना होगा और तदनुसार डिक्री को परिवर्तित करना होगा।*

और ***हसमत राय*** की यह इतरोक्ति इस उच्च न्यायालय के समक्ष किरायेदारों द्वारा आक्षेपित बेदखली आदेश के संचालन पर रोक लगाने के बाद बेदखली आदेशों को उनकी पुनरीक्षण चुनौती के लंबित रहने के दौरान लाई गई ऐसी सभी कार्रवाइयों का आधार रही है।

8.2 ***मोहम्मद इस्माइल बनाम दिनकर विनायकराव दोरलीकर,*** (2009) 10 एस.सी.सी. 193 के मामले में दिए गए निर्णय को आवेदनकर्ताओं की ओर से उद्धृत किया गया था, विशेष रूप से निम्नलिखित उद्धरण पर भरोसा करते हुए:

> *"13. दुर्भाग्य से, उच्च न्यायालय द्वारा बार-बार प्रतिप्रेषण आदेशों को पारित करने के साथ-साथ प्रत्यर्थी द्वारा अपने बयान में पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखने के लिए आवेदन में बताए गए तथ्य के बारे में किए गए स्वीकारोक्ति के बावजूद, हमारे लिए उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को स्वीकार करना संभव नहीं होगा, जो पश्चात्वर्ती घटनाओं के*

घटित होने के बाद प्रत्यर्थी की आवश्यकता पर विचार करने में विफल रहा, अर्थात:

1) प्रत्यर्थी के एक पुत्र की मृत्यु,

2) पिछले 8-9 वर्षों से प्रत्यर्थी के दूसरे पुत्र का फरार होना,

3) दो दुकानों पर कब्जा कर लिया गया है, और

4) एक अन्य किरायेदार लाल मोहम्मद से कब्जा ले लिया गया है, जिसमें तीसरा बेटा लिथो मशीन का कारोबार चला रहा है।

14. हमारे विचार में, हालांकि इस तरह के स्वीकृत तथ्यों पर निचली न्यायालयों द्वारा विचार नहीं किया गया था, हम अपील को पूर्ण रूप से अनुमति देने का प्रस्ताव नहीं करते हैं, लेकिन मामले को वापस उच्च न्यायालय में भेज देते हैं, जो बदले में, इस हद तक मुद्दों को विरचित करेगा कि क्या पश्चात्वर्ती घटनाओं के मद्देनजर, जैसा कि यहां पहले कहा गया है, मकान मालिक/प्रत्यर्थी की वास्तविक आवश्यकता पहले ही संतुष्ट हो चुकी है या नहीं। इस उद्देश्य के लिए, प्रत्यर्थी के लिए यह अनिर्णीत रहेगा कि वह बेदखली याचिका की अपने अभिवचनों में संशोधन करे, जिसके खिलाफ अपीलकर्ता/किरायेदार द्वारा अतिरिक्त आपत्ति भी दायर की जा सकती है।

8.3 ***एम.एम. कासिम बनाम मनोहर लाल शर्मा***, **(1981) 3** एस.सी.सी. 36**,** के मामले में**,** आवेदनकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया, उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की*:*

"15. *अगला उठाया जाने वाला कदम यह है कि क्या इस तरह के मकान मालिक होने का दावा करने वाले व्यक्ति ने इमारत पर अपना कब्जा करने के लिए किरायेदार को बेदखल करने की मांग की है, लेकिन अपील लंबित रहने के दौरान इमारत में पूरी तरह से अपना हित खो दिया है, जो कि वाद की निरंतरता है, क्या वह अभी भी इमारत में अपनी हित की समाप्ति या निर्वापन के बाद भी कार्रवाई को बनाए रखने या जारी रखने का हकदार होगा? गुणागुण के आधार पर इस तर्क की जांच करने पर, किराया अधिनियम के तहत कार्यवाही की एक विशेषता को ध्यान में रखा जा सकता है। किस हद तक और किन परिस्थितियों में न्यायालय कार्रवाई संस्थित के पश्चात्वर्ती घटनाओं पर ध्यान दे सकती है, यह मुख्य समस्या है। यह अब अनिर्णीत विषय नहीं है और इसकी गहराई से जांच करने की आवश्यकता नहीं है। पसुपुलेती वेंकटेश्वरलू मामले [(1975) 1 एस.सी.सी.* 770: *ए.आई.आर.* 1975 *एस.सी. 1409: : (1975) 3 एस.सी.आर. 958] में इस न्यायालय ने आंध्र प्रदेश भवन (पट्टा, किराया और बेदखली) नियंत्रण अधिनियम*, 1960 *के तहत कार्यवाही के संबंध में इस प्रश्न की जांच की। उस मामले में मकान मालिक ने किरायेदार को बेदखल करने की मांग की क्योंकि वह पट्टे पर दिए गए परिसर में अपना खुद का व्यवसाय शुरू करना चाहता था। दूसरे शब्दों में, बेदखली की कार्रवाई व्यक्तिगत आवश्यकता के लिए थी। कार्यवाही के दौरान यह पता चला कि कार्रवाई शुरू होने के बाद मकान मालिक ने एक दुसरे दुकान पर कब्ज़ा कर लिया जो उसकी आवश्यकता को पूरा करता था और इस पश्चात्वर्ती घटना पर किरायेदार ने न्यायालय से वादी का दावा ख़ारिज करने का अनुरोध किया। उस समय मकान मालिक के कहने पर एक पुनरीक्षण याचिका में कार्यवाही उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित थी, जिसमें कुछ तथ्यों की जांच के लिए प्रथम अपीली न्यायालय द्वारा विचारण*

न्यायालय को रिमांड देने पर सवाल उठाया गया था। इस पुनरीक्षण में, मकान मालिक के कहने पर, उच्च न्यायालय ने पश्चात्वर्ती घटना पर ध्यान दिया कि मकान मालिक की आवश्यकता पूरी तरह से संतुष्ट हो गई थी क्योंकि एक और दुकान उसके कब्जे में आ गया था। मकान मालिक द्वारा इस न्यायालय में अपील में, एक गंभीर अपवाद लिया गया कि उच्च न्यायालय कार्यवाही शुरू होने के पश्चात्वर्ती घटना को ध्यान में नहीं रख सकता है और मकान मालिक का दावा ख़ारिज कर सकता है और वह भी उस स्तर पर जब कार्यवाही मकान मालिक के कहने पर पुनरीक्षण में लंबित थी। इस तर्क को नकारते हुए और अपील को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने लक्ष्मेश्वर प्रसाद शुक्ल बनाम केश्वर लाल चौधरी [ए.आई.आर. 1940 एफ.सी. 26: 1940 एफ.सी.आर. 84] के निर्णय का संदर्भ देते हुए, पैटरसन बनाम अलबामा राज्य [294 यू.एस. 600, 607] :(एस.सी.सी. पृ. 773, पैरा 5) के निम्नलिखित परिच्छेद को स्वीकृति के साथ उद्धृत किया।

> *"हमने अक्सर अभिनिर्धारित किया है कि हमारे अपीली क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हमारे पास न केवल समीक्षाधीन निर्णय में त्रुटि को ठीक करने की शक्ति है, बल्कि न्याय की अपेक्षा के अनुसार मामले का निपटान करने की भी शक्ति है। और यह निर्धारित करने में कि न्याय की क्या आवश्यकता है, न्यायालय किसी भी बदलाव पर विचार करने के लिए बाध्य है, या तो वास्तव में या कानून में, जो निर्णय दर्ज होने के बाद से पर्यवेक्षण कर रहा है।*

लक्ष्मेश्वर प्रसाद शुक्ल मामले [294 यू.एस. 600, 607] में वरदाचरियार न्या. ने प्रमुख निर्णय में, टिप्पणी किया कि अपील की प्रकृति पुनः सुनवाई की होती है, इसलिए भारत में न्यायालयों ने अनेक मामलों में यह माना है कि अपील के

मामले में दी जाने वाली राहत को तय करने में, अपील न्यायालय को उन तथ्यों को भी ध्यान में रखने का अधिकार है, जो अपील की गई डिक्री के पारित होने के बाद अस्तित्व में आए हैं। कृष्णा अय्यर, न्या., ने पसुपुलेती वेंकटेश्वरलू मामले [ए.आई.आर. 1940 एफ.सी. 26: 1940 एफ.सी.आर. 84] में स्थिति को इस प्रकार अभिव्यक्त किया: (एस.सी.सी. पृ. 772, *773, पैरा 4)*

> *"यह हमारे प्रक्रियात्मक विधिशास्त्र के लिए बुनियादी है कि राहत के अधिकार को उस तारीख से अस्तित्व में माना जाना चाहिए जिस तारीख को कोई वादी विधिक कार्यवाही संस्थित करता है। यह सिद्धांत भी उतना ही स्पष्ट है कि प्रक्रिया न्यायिक प्रक्रिया की दासी है, न कि स्वामिनी। यदि कोई तथ्य, जो वाद के न्यायालय में आने के बाद उत्पन्न होता है और राहत के अधिकार या इसे ढालने के तरीके पर मौलिक प्रभाव डालता है, अधिकरण के ध्यान में परिश्रमपूर्वक लाया जाता है, तो वह इसे अनदेखा नहीं कर सकता या उन घटनाओं के प्रति अंधा नहीं हो सकता जो डिक्रीत उपाय को बेकार या अयोग्य बनाती हैं। न्यायसंगतता प्रक्रिया के नियमों को बाध्यकारी बनाने का औचित्य साबित करती है, जहां किसी विशिष्ट प्रावधान या न्यायपूर्ण व्यवहार का उल्लंघन नहीं किया जाता है, पर्याप्त न्याय को बढ़ावा देने की दृष्टि से - निश्चित रूप से, अन्य विघटनकारी कारकों या सिर्फ परिस्थितियों के आभाव के अधीन है। न ही हम विचारण न्यायालय तक सीमित रखने के लिए अद्यतन तथ्यों पर ध्यान देने की इस शक्ति पर कोई सीमा लगाने पर विचार कर सकते हैं। यदि मुकदमा चलता है, तो शक्ति मौजूद है, अन्य विशेष*

परिस्थितियों के अभाव में विधि या न्याय में उस अनुक्रम का सहारा लेने से रोका जा सकता है... हम इस प्रतिपादना की पुष्टि करते हैं कि पक्षकार द्वारा दावा किया गया अधिकार या उपाय को न्यायसंगत और सार्थक बनाने के साथ-साथ विधिक रूप से और तथ्यात्मक रूप से वर्तमान वास्तविकताओं के अनुसार, न्यायालय कर सकती है, और कई मामलों में, कार्यवाही संस्थित के पश्चात्वर्ती घटनाओं और घटनाक्रमों का सावधानीपूर्वक संज्ञान लेना चाहिए, बशर्ते दोनों पक्षकारगण के निष्पक्षता के नियमों का ईमानदारी से पालन करें। ..."

संक्षेप में, सि.प्र.सं. के आदेश 41 नियम 27, की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक उचित और नियमित आवेदन था, जिसमें अतिरिक्त साक्ष्य के लिए वादी के कार्रवाई जारी रखने के अधिकार की जड़ को काटते हुए महत्वपूर्ण महत्व की पश्चात्वर्ती घटना की ओर न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया गया था। इसके साथ, डिक्री की एक प्रमाणित प्रति के रूप में साक्ष्य था जो दर्शाता था कि वादी के पास, भले ही कार्रवाई शुरू करने के लिए कुछ अधिकार थे, उन्होंने संपत्ति में सभी हित खो दिए थे और संपत्ति एक ऐसे व्यक्ति का अनन्य स्वामित्व बन गई थी जो कार्यवाही में पक्षकार नहीं था, वे अब अपने लाभ के लिए कार्यवाही जारी रखने के हकदार नहीं थे।"

8.4 ***जय प्रकाश गुप्ता (मृतक) द्वारा वि.प्रति. बनाम रियाज अहमद और अन्य,*** (2009) 10 एस.सी.सी. 197 के मामले पर, आवेदनकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया, में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की है:

> "20. *यह सच है कि किसी वाद या मूल कार्यवाही का विचारण उसके सभी चरणों में वाद हेतुक के आधार पर की जानी चाहिए क्योंकि यह अपने प्रारंभ की तारीख पर मौजूद थी। इस नियम का एकमात्र अपवाद यह है कि कोई न्यायालय वाद या मूल कार्यवाही के आरंभ होने के बाद घटित घटनाओं पर ध्यान दे सकता है और परिवर्तित शर्तों के आधार पर पक्षकारगण को राहत प्रदान कर सकता है, (जो) उन मामलों में लागू होता है जहां यह दिखाया जाता है कि दावा की गई मूल राहत, परिस्थितियों में बाद के परिवर्तन के कारण अनुपयुक्त हो गई है या मुकदमा को संक्षिप्त करने या पक्षकारगण के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए न्यायालय के निर्णय को परिवर्तित परिस्थितियों पर आधारित करना आवश्यक है। (राय चरण मंडल बनाम विश्वनाथ मंडल [ए.आई.आर. 1915 कल. 103: 20 सी.एल.जे.* 107], *ए.आई.आर. पृष्ठ 104 देखें)। यह सर आशुतोष मुखर्जी, न्या. (तब उनका लॉर्डशिप था) द्वारा इस प्रश्न पर व्यक्त किया गया विचार था कि पश्चात्वर्ती घटनाक्रमों को न्यायालय द्वारा कार्यवाही या वाद के लंबित रहने या अपील चरण में भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।*

8.5 ***वाद शीर्षक अब्दुल गफ्फर बनाम एच.एस. श्रीनिवास सेट्टी (मृतक) द्वारा वि.प्रति.*** (2009) 9 एस.सी.सी. 367**;** ***मोहन लाल बनाम तीरथ राम चोपड़ा और अन्य*** (1982) डी.आर.जे. 298; और ***शेषम्बल (मृतक) द्वारा वि.प्रति. बनाम चेलूर कॉर्पोरेशन चेलूर बिल्डिंग और अन्य*** (2010) 3 एस.सी.सी. 470 के मामले में दिए गए निर्णयों को भी आवेदनकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अपने तर्क के समर्थन में उद्धृत किया गया था कि अंतिम न्यायनिर्णायक

प्राधिकारी द्वारा अंतिम निर्णय होने तक होने वाली पश्चात्वर्ती घटनाएं प्रासंगिक हैं और उन्हें अभिलेख पर लिया जाना चाहिए।

9. इसके बाद न्यायिक निर्णय की दूसरी श्रृंखला आती है, जिसका उल्लेख अनावेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथित पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर लेने के लिए अपने प्रतिरोध को पुष्ट करने के लिए किया है।

9.1 ***हसमत राय*** की इतरोक्ति और उस श्रृंखला के अन्य न्यायिक निर्णयों की जांच करने के बाद**,** ***गया प्रसाद बनाम प्रदीप श्रीवास्तव,*** ए.आई.आर. 2001 एस.सी. 803 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

> "*10.* ***हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि मकान मालिक की आवश्यकता की वास्तविकता के बारे में निर्णय लेने के लिए महत्वपूर्ण तिथि बेदखली के लिए उसके आवेदन की तिथि है।*** *पूर्ववर्ती दिनों में शायद उसके लिए विचार की उक्त महत्वपूर्ण तारीख तक पहुंचने के लिए उपयोगिता हो सकती है।* ***यदि याचिका के बाद की अवधि के दौरान हर*** *पश्चात्वर्ती* ***घटना को मकान मालिक द्वारा अभिवाक की गई आवश्यकता की वास्तविकता को पहचानने के लिए ध्यान में रखा जाय, तो शायद तब तक कोई अंत नहीं होगा जब तक कि हमारी मुकदमेबाजी की धीमी प्रक्रिया प्रणाली में दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति बनी रहेगी।*** *मकान मालिक द्वारा अपने बेटे को इमारत की जरूरत के आधार पर बेदखल करने के 23 साल बाद, न तो मकान मालिक और न ही उसके बेटे से यह उम्मीद की जाती है कि वे बिना कोई काम किए बेकार बैठे रहे होंगे, नहीं तो कोई नया काम शुरू करने या कोई नया काम शुरू करने से इमारत*

पर कब्जा करने की उनकी जरूरत खत्म हो जाएगी। यह एक एक कठोर वास्तविकता है कि मुकदमेबाजी की अवधि जितनी लंबी होगी, इस लंबे अंतराल के दौरान होने वाले घटनाक्रमों की संख्या उतनी ही अधिक होगी। यदि एक युवा उद्यमी एक नया उद्यम शुरू करने का फैसला करता है और उस आधार पर वह या उसके पिता इमारत से एक किरायेदार को बेदखल करना चाहता है, तो प्रस्तावित उद्यम मुकदमेबाजी की पारंपरिक लंबी अवधि के दौरान पश्चात्वर्ती घटनाक्रम से मंद नहीं होगा। उसकी ज़रूरत पर धूल जम सकती है, उसकी सतह पर पट्टिका चिपक सकती है, फिर भी ज़रूरत बरकरार रहेगी। बस ज़रूरत पर्पटी को मिटाने और चमक देखने की है। ***यह घातक है, और हम कह सकते हैं, मुकदमेबाजी के पिछले सभी स्तरों से गुजरने के बाद, अंतिम स्थान पर पहुंचने की पूर्व संध्या पर एक आवेदक के सामने दरवाजा बंद करना अन्यायपूर्ण है, केवल इस आधार पर कि कुछ घटनाक्रम लंबित थे, क्योंकि विरोधी पक्षकार इस मामले को इतनी लंबी अवधि तक खींचने में सफल रहा।***

11. हम यह नहीं भूल सकते कि मकान मालिक की आवश्यकता पर सद्भावपूर्वक विचार करते समय निर्णायक तारीख याचिका की तारीख होती है। *रमेश कुमार बनाम केशो राम* [1992 *पुर. (2) एस.सी.सी. 623] में इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ (एम.एन. वेंकटचलया, न्या., जो उस समय थे, और एन.एम. कासलीवाल, न्या.) ने उल्लिखित किया कि सामान्य नियम यह है कि पक्षकारगण के अधिकारों और दायित्वों को उसी तरह निर्धारित किया जाना चाहिए जैसे कि वे वाद शुरू होने के समय थे और एकमात्र अपवाद यह है कि न्यायालय को पश्चात्वर्ती घटनाओं पर विचार करते हुए उचित रूप से राहत देने से नहीं रोका जाता है बशर्ते कि इस तरह की घटनाओं का उन अधिकारों और दायित्वों पर प्रभाव पड़ा हो। विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने उसमें जो टिप्पणी की वह यह है:*

"6. *सामान्य नियम यह है कि किसी भी मुकदमा में पक्षकारगण के अधिकारों और दायित्वों पर न्यायनिर्णयन किया जाता है जैसा कि वे वाद के प्रारंभ में प्राप्त होते हैं। लेकिन यह एक अपवाद के अधीन है। जहां भी तथ्य या कानून की पश्चात्वर्ती घटनाएं होती हैं, जिनका पक्षकारगण के राहत के अधिकार या राहत के ढाँचे पर असर डालने वाले पहलुओं पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, तो न्यायालय को राहत को ढालने के लिए तथ्य और विधि के बाद के परिवर्तनों का सावधानीपूर्वक संज्ञान लेने से रोका नहीं जाता है।*

12. इस न्यायालय ने कमलेश्वर प्रसाद बनाम प्रदुमंजू अग्रवाल [1997 (4) एस.सी.सी. 413] में उसी सिद्धांत को दोहराया कि निर्णायक तारीख आम तौर पर याचिका दायर करने की तारीख होती है। उस मामले में, दो-न्यायाधीशों की पीठ (के. रामास्वामी न्या. और जीबी पटनायक, न्या.) ने अभिनिर्धारित किया कि किरायेदार परिसर में व्यवसाय शुरू करने की इच्छा रखने वाले मकान मालिक की मृत्यु की *पश्चात्वर्ती* ***घटना भी उनके द्वारा पहले स्थापित वास्तविक आवश्यकता को दूर करने के लिए पर्याप्त नहीं है।*** .....

13. हमारी राय में, आवश्यकता की वास्तविकता को ढंकने के लिए पश्चात्वर्ती घटनाएं ऐसी प्रकृति और ऐसे आयाम की होनी चाहिए कि याचिका दायर करने वाले याचिकाकर्ता पक्ष द्वारा प्रतिपादित आवश्यकता को इस तरह की पश्चात्वर्ती घटनाओं से पूरी तरह से ग्रहण कर लेना चाहिए था। ***पसुपुलेती वेंकटेश्वरलू बनाम मोटर एंड जनरल ट्रेडर्स [1975 (1) एस.सी.सी. 770] में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने किराया नियंत्रण मुकदमेबाजी के क्षेत्र में वाद हेतुक को प्रभावित करने वाली***

पश्चात्वर्ती घटनाओं के बल पर राहत को फिर से ढालने की आवश्यकता की ओर इशारा किया, चेतावनी दी कि इस तरह की पश्चात्वर्ती घटनाओं का संज्ञान बहुत सावधानी से लिया जाना चाहिए। .....

14. इस न्यायालय की दूसरी तीन-न्यायाधीश की पीठ, जिसने हसमत राय बनाम रघुनाथ प्रसाद [1981 (3) एस.सी.सी. 103] में उपरोक्त निर्णय को मंजूरी दी और उसका पालन किया, ने इस बात पर जोर दिया कि पश्चात्वर्ती घटनाओं को उस पक्षकार की आवश्यकता को पूरी तरह से संतुष्ट करना चाहिए जिसने व्यक्तिगत आवश्यकता के आधार पर बेदखली के लिए याचिका दायर की थी। .....

15. ***न्यायिक शिथिलता, जिसके लिए दुर्भाग्यवश हमारी व्यवस्था बदनाम हो चुकी है, जिसके कारण वाद के शुरू करने से लेकर अंतिम चरण तक कई वर्षों की देरी हो जाती है, व्यवस्था को पीड़ित करने वाली बीमारी है। इस लंबे अंतराल के दौरान कई घटनाएं होती हैं जो पक्षकारगण के साथ-साथ वाद के विषय के संबंध में भी हो सकती हैं। यदि वाद हेतुक व्यवस्था की इस बीमारी के कारण ऐसी पश्चात्वर्ती घटनाओं में डूब जाता है, तो यह पहले से ही हुई हानि के बावजूद वादी के विश्वास को तोड़ देता है।***"

(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)

9.2 ***कैरोना लिमिटेड बनाम पार्वती स्वामीनाथन एंड संस,*** *(2007) 8* एस.सी.सी. 559 के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

"42. हमारे फैसले में, कानून काफी सुस्थापित है। मूल नियम यह है कि पक्षकारगण के अधिकारों का निर्धारण वाद के

संस्थित करने की तारीख के आधार पर किया जाना चाहिए। इस प्रकार, यदि वादी के पास वाद दायर करने की तारीख पर कोई वाद हेतुक नहीं है, तो आमतौर पर, उसे वाद दायर करने के बाद उत्पन्न होने वाली वाद हेतुक का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जाएगी। इसके विपरीत, किसी भी पश्चात्वर्ती घटना के कारण वादी को आम तौर पर कोई राहत देने से इनकार नहीं किया जाएगा यदि वाद संस्थित करने की तारीख पर, उसे इस तरह की राहत की दावा करने का पर्याप्त अधिकार है।

9.3 ***उषा पी. कुवेलकर और अन्य बनाम रवींद्र सुबराय दलवी***, 2008 (1) आर.एल.आर. 63 के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने किरायेदार के अधिवक्ता के तर्क को खारिज कर दिया कि चूंकि मकान मालिक की मृत्यु हो गई है, इसलिए उसके साथ ही आवश्यकता भी समाप्त हो गई, इसलिए प्रश्न को मकान मालिक की वास्तविक आवश्यकता के बारे में फिर से जांच करनी होगी। उच्चतम न्यायालय ने ***शकुंतला बाई और अन्य बनाम नारायण दास और अन्य***, (2004) 5 एस.सी.सी. 772 के मामले में अपने पहले के फैसले का उल्लेख किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मकान मालिक की वास्तविक आवश्यकता की जांच बेदखली की कार्यवाही शुरू करने की तारीख को इस अर्थ में की जानी चाहिए कि यदि अपील के लंबित रहने के दौरान मकान मालिक का निधन हो जाता है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा क्योंकि उनके विधिक उत्तराधिकारी पूरी तरह से संपत्ति की रक्षा करने के हकदार हैं।

9.4 ***धर्मपाल गुप्ता और अन्य बनाम आनंद प्रकाश,*** (2008) 155 डी.एल.टी. 681 के मामले में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने इस मुद्दे की विस्तार से जांच की और ***हसमत राय*** इतरोक्ति सहित उपरोक्त उद्धृत उदाहरणों पर ध्यान देने के बाद, निम्नानुसार टिप्पणी की:

> "7. ***इसमें कोई संदेह नहीं है कि उच्चतम न्यायालय का पहले का दृष्टिकोण यह था कि पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए, हालांकि, जिस तरह से बेदखली के मामलों में मुकदमेबाजी में दशकों लग रहे हैं, यह दृष्टिकोण अब बदल गया है***.....
>
> ....
>
> ***9. यह प्रतिपादना कि पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए, आकर्षक लग सकता है, हालांकि, यह पूरी तरह से अन्यायपूर्ण प्रतिपादना है क्योंकि ज्यादातर समय केवल मकान मालिक की पश्चात्वर्ती घटनाओं को न्यायालयों के समक्ष रखा जाता है और किरायेदार/किरायेदार के परिवार की पश्चात्वर्ती घटनाओं को कभी भी ध्यान में नहीं रखा जाता है।*** *जैसा कि इस मामले में, मूल किरायेदार की मृत्यु हो गई थी, परिसर के किराया का 1992 से भुगतान नहीं किया गया है और परिसर का वास्तव में उपयोग किया जा रहा है या नहीं, कोई नहीं जानता। आम तौर पर, ऐसे परिसर में कोई भी नहीं रहता है और उन्हें ताला लगाकर बंद रखा जाता है। मृतक किरायेदार का परिवार भी समय के साथ बढ़ता गया क्योंकि उसके* 5 *वि.प्रति. का उल्लेख वि.प्रति. आवेदन में ही किया गया है। यह स्पष्ट है कि वे सभी एक कमरे में नहीं रहे होंगे, उन सभी का अलग-अलग पेशा/कारोबार होगा और उन्होंने अपना परिसर हासिल कर लिया होगा और अलग-अलग रहते होंगे। मकान मालिक, जिसने कई साल पहले 50 रुपये या 60 रुपये प्रति माह पर किराए पर*

एक कमरा दिया था, उसके पास किरायेदार के परिवार में घटनाक्रम को जानने का कोई साधन नहीं होगा, जब तक कि वह उसी परिसर या आस-पास के क्षेत्र में नहीं रहता हो और किरायेदार के परिवार के करीब न हो। वह नहीं जानता था कि किरायेदार के बेटों ने कौन से अलग-अलग व्यावसायिक हित हासिल किए थे, किरायेदार के परिवार के अन्य सदस्यों ने कौन सी अलग-अलग संपत्ति हासिल की थी; ये चीजें सिर्फ जांच एजेंसियां ही ढूंढ सकती हैं। 50 रुपये या 60 रुपये प्रति माह किराया पाने वाला व्यक्ति किरायेदार के परिवार की वर्तमान स्थिति का पता लगाने के लिए जांच एजेंसी पर 30,000-40,000 रुपये खर्च नहीं करना चाहेगा। अधिकांश समय किरायेदार अपने स्वयं के विकास, निवास या व्यवसाय के लिए अलग-अलग परिसरों के अपने अधिग्रहण का खुलासा नहीं करते हैं और परिसर को केवल इस उद्देश्य से ताला लगाकर रखा जाता है कि परिसर खाली करने के समय मकान मालिक से पैसे वसूले जाएं, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भारत में किसी भी मुकदमे के अंतिम निष्कर्ष में 20-30 वर्ष लगते हैं। यह केवल एक पहलू है। बदलती हुई परिस्थितियों का दूसरा पहलू यह है कि जिस व्यक्ति को अपनी वास्तविक आवश्यकता के लिए परिसर की सख्त आवश्यकता होती है, वह विधायिका द्वारा विकसित तथाकथित संक्षिप्त प्रक्रिया के तहत बेदखली याचिका दायर करता है और इस तथाकथित संक्षिप्त प्रक्रिया को अंतिम रूप देने में कई वर्ष लग जाते हैं। वर्तमान पुनरीक्षण भी वर्ष 2000 से न्यायालय में लंबित है और इसमें 8 वर्ष लग गए हैं। इस पुनरीक्षण याचिका के लंबित रहने के दौरान न केवल मकान मालिक/प्रत्यर्थी के पिता की मृत्यु हो गई थी, बल्कि दूसरी ओर किरायेदार के परिवार की परिस्थितियां भी बदल गई थीं और मूल किरायेदार की मृत्यु हो गई थी। न्यायालयों में मुकदमेबाजी कछुए की गति से चलती है। न्यायिक प्रणाली, जो

मकान मालिक की तत्काल वास्तविक आवश्यकताओं के प्रति सजग नहीं है, समय को रोक कर नहीं रख सकती है और यह आदेश नहीं दे सकती है कि जब तक मामले का फैसला नहीं किया जाता है, मकान मालिक और किरायेदार की दुनिया में कुछ भी नहीं होगा। समय किसी का इंतजार नहीं करता, न्यायालयों का भी नहीं। मकान मालिक के बच्चों बड़े होंगे। यह जानकर कि उनका अपना परिसर किराए पर है और मुकदमेबाजी के बावजूद खाली नहीं किया जा रहा है, उन्हें अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए 20 साल इंतजार करने की आवश्यकता नहीं है और वे अपने लिए या परिवार के अन्य सदस्यों के लिए कुछ वैकल्पिक व्यवस्था करने के लिए बाध्य हैं। यह बेहद अन्यायपूर्ण है कि न्यायालय को समयबद्ध सीमा के भीतर मामले का फैसला नहीं कर पाती है और फिर मकान मालिक या किरायेदार की परिस्थितियों में हुए बदलाव को ध्यान में रखना चाहिए।

10. 10-20 वर्षों की अवधि, जो सामान्यतः बेदखली याचिकाओं में व्यतीत होती है, किसी के भी जीवन की परिस्थितियों को बदलने के लिए पर्याप्त है और परिस्थितियों में प्रत्येक परिवर्तन के साथ, जैसे परिवार में वृद्धि या परिवार में कमी या परिवार में मृत्यु या विवाह, पुनरीक्षण या अपील के लंबित रहने के दौरान एक नया वाद हेतुक उत्पन्न होगा और नए सिरे से विचारण पुनः शुरू होगा और इस तरह किसी भी व्यक्ति के जीवनकाल में कोई याचिका समाप्त नहीं हो सकती है। इसलिए, मैं मानता हूं कि न्यायालय को केवल उस वाद हेतुक को देखना है जो उस समय उपलब्ध थी जब बेदखली याचिका दायर की गई थी। एक बार जब विचारण समाप्त हो जाती है और निर्णय सुना दिया जाता है, तो संशोधन या अपील के दौरान किसी भी नई परिस्थिति पर विचार नहीं किया जा सकता है।

> ***11. पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखते हुए, वास्तव में, पक्षकारगण को किसी न किसी बहाने से मामले को लम्बा खींचने के लिए प्रोत्साहित किया गया है। यदि मकान मालिक बूढ़ा और बीमार है, तो किरायेदार मकान मालिक के मरने की प्रतीक्षा में याचिका को खींचता रहता है ताकि पूरी वाद हेतुक ही समाप्त हो जाए। न्यायालय में याचिका को खींचना इतना आसान है कि याचिका दायर करने का पूरा उद्देश्य ही विफल हो जाता है। इसलिए, मैं मानता हूं कि बेदखली याचिकाओं में पश्चात्वर्ती घटनाएं पुनरीक्षण में निर्णय का आधार नहीं बन सकती हैं और न्यायालय को याचिका दायर करते समय जो vहेतुक थी, उस पर कायम रहना होगा। पश्चात्वर्ती घटनाएं केवल एक पक्ष को अत्यधिक प्रभावित करती है क्योंकि दूसरे पक्ष की पश्चात्वर्ती घटनाएं हमेशा अंधेरे में होती हैं। याचिकाकर्ता का तर्क मान्य नहीं है।'***
>
> *(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)*

इस न्यायालय की समन्वय पीठ के उपरोक्त निर्णय के विरुद्ध अपील दायर करने वाली विशेष अनुमति याचिका को शीर्ष न्यायालय ने खारिज कर दिया था।

9.5 ***रूपारेल एंड कंपनी (दिल्ली) बनाम एस. अवतार सिंह पुरी***, 2009 (159) डी.एल.टी. 101 के मामले में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने विधिक स्थिति को दोहराया और इस प्रकार निर्धारित किया:

> "18. *किसी भी घटना में, मुझे लगता है कि याचिकाकर्ता द्वारा अपने प्रस्तुति के समर्थन में जिस मूल निर्णय पर भरोसा किया गया है कि पश्चात्वर्ती घटनाओं पर गौर किया जा सकता है, वह*

हसमत राय (पूर्वोक्त) है क्योंकि इसका पालन केवल वैराइटी एम्पोरियम (पूर्वोक्त) में किया गया है। हालांकि, हसमत राय (पूर्वोक्त) में मेरे विद्वान पूर्ववर्ती, न्यायमूर्ति श्री एस.एन. धींगरा ने धर्म पाल गुप्ता (पूर्वोक्त) के मामले में विस्तार से विचार किया है, जिसमें उन्होंने निष्कर्ष निकाला है कि न्यायालय को केवल वाद हेतुक को देखना है जो उस समय उपलब्ध था जब बेदखली याचिका दायर की गई थी। ***न्यायिक अनुशासन और स्वामित्व के लिए आवश्यक है कि मैं एक समन्वय पीठ के फैसले का पालन करूं, विशेष रूप से, जब अंतरिम चरण में भाई न्यायमूर्ति श्री एस.एन. धींगरा ने पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज कर दिया था। उक्त आदेश को अंतिम रूप दिया गया है क्योंकि उक्त अंतरिम आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका भी खारिज कर दी गई है। मेरी राय में, पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता की विशेष अनुमति याचिका को खारिज करने से यह मुद्दा समाप्त हो जाता है और यह न्यायालय पश्चात्वर्ती घटनाओं को नहीं देख सकता है।***"

(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)

9.6 ***स्पीडलाइन एजेंसीज बनाम टी. स्टेंस एंड कंपनी लिमिटेड***, 2010 (6) एस.सी.सी. 257 के मामले में, तमिलनाडु भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) अधिनियम, 1960 के तहत कार्यवाही करते हुए, उच्चतम न्यायालय ने ***हसमत राय*** के इतरोक्ति के साथ-साथ कई अन्य न्यायिक उदाहरणों पर ध्यान दिया और कहा कि यह कई मामलों में बहुत अन्याय करेगा यदि पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखा जाए जब तक कि पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखने के

लिए बहुत मजबूर करने वाली परिस्थितियां न हों, इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

> *"22. विशेष रूप से किराया अधिनियमों द्वारा शासित मामलों में पश्चात्वर्ती घटनाओं को ध्यान में रखना, वर्तमान मामले जैसे मामले में मकान मालिकों को कठिनाई में डाल देगा। इस संदर्भ में, जोगिंदर पाल बनाम नवल किशोर बहल (2002) 5 एस.सी.सी. 397 के पैरा 9 में अभिनिर्धारित किया गया था कि:- "9.* ***किराया नियंत्रण कानून किरायेदारों के पक्ष में भारी हैं और उन्हें समाज के कमजोर वर्गों के रूप में माना जाता है, जिन्हें लालची मकान मालिकों के शोषण और बेईमानी के खिलाफ विधायी संरक्षण की आवश्यकता है। कानूनों की व्याख्या करते समय न्यायालयों द्वारा विधायी मंशा का सम्मान किया जाना चाहिए। लेकिन यह विधायिका के प्रति निर्दयी होना है यदि उन्हें इस आशय से जिम्मेदार ठहराया जाता है कि वे केवल किरायेदारों के पक्ष में झुकते हैं और किरायेदारों के प्रति निष्पक्ष होते हुए, जमींदारों के साथ अन्याय करने की हद तक जाते हैं।*** *विधायिका किरायेदारों और मकान मालिकों दोनों के प्रति निष्पक्ष है....." .....*
>
> *24. वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण के लंबित रहने के दौरान कंपनी के विलय की बाद की घटना घटी। हालांकि, उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण याचिका के लंबित रहने या इस न्यायालय के समक्ष मामला लंबित रहने के दौरान घटित पश्चात्वर्ती घटनाओं को इस न्यायालय ने कुछ मामलों में ध्यान में रखा है,* ***अपील और पुनरीक्षण में क्षेत्राधिकार के प्रयोग के बीच अंतर के प्रश्न पर उन मामलों में बहस या निर्णय नहीं लिया गया था।***

25. अधिनियम की धारा 25 के तहत एक पुनरीक्षण में, न्यायालय प्रतिबंधित क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा है और अपील न्यायालय की व्यापक शक्तियों का नहीं। मैसर्स श्री राजा लक्ष्मी डाइंग वर्क्स और अन्य बनाम रंगास्वामी चेट्टियार (1980) 4 एस.सी.सी. 259 पृष्ठ 262 पर यह अभिनिर्धारित किया गया था: -

> *"..... इसलिए, धारा 25 में प्रयुक्त व्यापक भाषा के बावजूद, उच्च न्यायालय को स्पष्ट रूप से तथ्य के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि यह अधीनस्थ प्राधिकारी के निष्कर्ष से सहमत नहीं है। तमिलनाडु भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) अधिनियम की धारा 25 के तहत उच्च न्यायालय को प्रदत्त शक्ति सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति जितनी संकीर्ण नहीं हो सकती है, लेकिन दत्तोनपंत गोपालवाराव देवकाटे बनाम विट्ठलराव मारुथीराव जनागावल1 में उंटवालिया, न्या. के शब्दों में, "यह उच्च न्यायालय को पहली अपील की दूसरी न्यायालय बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है"।*

26. श्री परासरन ने दोहराया कि उच्च न्यायालय के पास केवल सीमित अधिकार क्षेत्र की शक्ति है और अपील न्यायालय की शक्तियां नहीं हैं, पुनरीक्षण याचिका के लंबित रहने के दौरान हुई पश्चात्वर्ती घटना को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए, उच्च न्यायालय केवल पुनरीक्षण के तहत आदेश की वैधता के रूप में निर्णय लेगा।

(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)

9.7 ***डी. शशि कुमार बनाम सुंदरराजन***, सिविल अपील सं. 7546-7547/2019, 23.09.2019 को फैसला सुनाया गया था, के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

> *"7. प्रारंभ में ही यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि उच्च न्यायालय के समक्ष सिविल पुनरीक्षण याचिका को अपील की प्रकृति के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। विचार-विमर्श का दायरा केवल इस बात पर ध्यान देना है कि क्या मूल न्यायालय अर्थात् किराया नियंत्रक द्वारा दर्ज की गई संतुष्टि में कोई विकृति है और इस आलोक में कि क्या कानून के तहत अपील प्राधिकारी ने अपनी संतुष्टि के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए साक्ष्य की पृष्ठभूमि में पहलू पर विचार किया है। सिविल पुनरीक्षण याचिका में साक्ष्यों का पुनःमूल्यांकन यह इंगित करने के लिए कि एक अन्य दृष्टिकोण संभव है, उत्पन्न नहीं होगा। इस हद तक, आक्षेपित आदेश का अवलोकन इंगित करता है कि उच्च न्यायालय वास्तव में आगे बढ़ा है जैसे कि पूरे साक्ष्य को उसके द्वारा पुन:मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। इस पृष्ठभूमि में इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि क्या किराया नियंत्रक ने अधिनियम, 1960 की धारा 10(3)(ङ) के तहत आवश्यक वास्तविक दावे और किरायेदार को कठिनाई, यदि कोई हो, जैसा कि उसके परंतुक में उल्लिखित किया गया है, के बारे में संतुष्ट करके मामले पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार किया है।*
>
> *10. इसके अलावा, **उच्च न्यायालय भी गलत तरीके से इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि मांगे गए वास्तविक कब्जे न केवल याचिका की तारीख को होने चाहिए, बल्कि अधिकारों के अंतिम न्यायनिर्णयन की तारीख को भी बना रहना चाहिए।** सबसे पहले, अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जो यह इंगित करती हो कि याचिका दायर करने के समय जिस आवश्यकता*

का अभिवाक किया गया था, वह इस बिंदु पर नहीं है। अन्यथा भी इस तरह के निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सकता, जब यह नहीं भूलना चाहिए कि न्यायिक प्रक्रिया में बहुत लंबा समय लगता है और ***प्रक्रिया में देरी के कारण यदि लाभ अस्वीकार कर दिया जाता है तो यह केवल किरायेदारों को मुकदमेबाजी को लंबा करने के लिए प्रोत्साहित करेगा ताकि अधिकार को हराया जा सके।*** *वर्तमान मामले में यह देखा गया है कि मकान मालिक द्वारा दायर याचिका वर्ष 2004 की है जिसका निपटान किराया नियंत्रक द्वारा वर्ष 2011 में ही कर दिया गया था। तत्पश्चात् अपील का निपटान वर्ष 2013 में अपील प्राधिकारी द्वारा कर दिया गया था। उच्च न्यायालय ने स्वयं पुनरीक्षण याचिका का निपटान करने के लिए केवल 06.03.2017 का समय लिया था। पूरी देरी के लिए मकान मालिक को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है और राहत से इनकार नहीं किया जा सकता है।* ***यदि याचिका दायर करने की तारीख तक आवश्यकता बनी रहती है और यह साबित हो जाती है, तो न्यायिक प्रक्रिया में समय व्यतीत होने के बावजूद यह पर्याप्त होगा।*** *गया प्रसाद बनाम प्रदीप श्रीवास्तव, (2001) 2 एस.सी.सी. 604 के मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि* ***मकान मालिक को कानूनी प्रणाली की सुस्ती के लिए दंडित नहीं किया जाना चाहिए और मकान मालिक की वास्तविक आवश्यकता तय करने के लिए निणार्यक तारीख बेदखली के लिए आवेदन की तारीख है, जिसे हम इसके द्वारा दोहराते हैं।***

(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)

9.8 ***शंकरलाल नडानी बनाम सोहनलाल जैन*** सिविल अपील संख्या 2816/2022 ***के मामले में,*** जिसका फैसला 12.04.2022 को किया गया था, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

> *"29. इसके अलावा, सिद्धांतों में से एक सिद्धांत यह भी है कि पक्षकारगण के अधिकारों को उस तारीख को निर्धारित किया जाना चाहिए जब वाद शुरू होता है अर्थात, वाद दायर करने की तारीख। **वादी उस दिन डिक्री का हकदार है जब उसने कार्यवाही शुरू की थी, इसलिए, उक्त दिन तक पक्षकारगण के अधिकारों की जांच की जानी चाहिए।** हाल ही में, ई.सी.जी.सी. लिमिटेड बनाम मोकुल श्रीराम ई.पी.सी. जे.वी. के रूप में रिपोर्ट किए गए एक फैसले में यह पीठ इस सवाल की जांच कर रही थी कि क्या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत अपील दायर करते समय निक्षेप की शर्त लागू होगी या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत मौजूद प्रावधान लागू होंगे जब शिकायत दर्ज की गई थी। यह पीठ गरिकापति वीरया बनाम एन. सुब्बैया चौधरी, विट्ठलभाई नारनभाई पटेल बनाम विक्रय कर आयुक्त, म.प्र. नागपुर और हरदेवदास जगन्नाथ बनाम असम राज्य के मामले में संविधान पीठ के निर्णयों विचार कर रही है, जिसमें अभिनिर्धारित किया गया कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के प्रावधान 2019 अधिनियम के शुरू होने से पहले दायर शिकायतों पर लागू नहीं होंगे। इसलिए, कब्जे के लिए वाद में पारित निर्णय और डिक्री किसी भी अवैधता से ग्रस्त नहीं है।*
>
> *(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)*

10. पुनरावृत्ति की कीमत पर, मैं अपना सुविचारित राय व्यक्त करता हूं कि ***हसमत राय*** की इतरोक्ति को दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की विशिष्ट संरचना के विपरीत नहीं पढ़ा जा सकता है। इस बात को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि अधिनियम के सामाजिक कल्याण छत्र को आंशिक रूप से उठाते हुए, अध्याय IIIक को अधिनियम में शामिल किया गया था ताकि मामलों की नामित श्रेणी में बेदखली की कार्यवाही में तेजी लाई जा सके; कि अधिनियम की धारा 25ख(8) के तहत नामित श्रेणियों के अंतर्गत आने वाली बेदखली याचिकाओं पर किराया नियंत्रक द्वारा पारित अंतिम आदेश किराया नियंत्रण अधिकरण की अपीली जांच के लिए उत्तरदायी नहीं है; और यह कि अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत उच्च न्यायालय द्वारा जांच का दायरा यह पता लगाने के लिए सीमित है कि क्या किराया नियंत्रक द्वारा पारित अंतिम आदेश कानून के अनुसार है, और उस उद्देश्य के लिए, उच्च न्यायालय को अपने स्वयं के विचारों के साथ-साथ तथ्यों पर किराया नियंत्रक के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने से रोका गया है।

11. इसके अलावा, जिन परिस्थितियों में ***हसमत राय*** की इतरोक्ति अस्तित्व में आई, वे वर्तमान मामले से पूरी तरह से अलग थे। ***हसमत राय*** (पूर्वोक्त) के मामले में, मध्य प्रदेश आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 (इसके बाद "एम.पी. अधिनियम" के रूप में संदर्भित) के तहत मामला की परिस्थितियां इस प्रकार थीं। मकान मालिक ने दो आधारों पर कब्जे की वसूली के लिए मुकदमा दायर

किया, अर्थात् दवा की दुकान खोलने के लिए परिसर की आवश्यकता और पुनर्निर्माण और मरम्मत के प्रयोजनों के लिए परिसर की आवश्यकता। विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष दिया कि परिसर जीर्ण-शीर्ण स्थिति में था, इसलिए पुनर्निर्माण की आवश्यकता थी और मकान मालिक के पास पुनर्निर्माण करने के लिए पर्याप्त धन था; कि मकान मालिक द्वारा निर्धारित आवश्यकता विविध थी जहां संपत्ति के सामने के हिस्से का उपयोग दवा की व्यवसाय के लिए किया जाएगा और पीछे के हिस्से का उपयोग निवास के लिए किया जाएगा। किरायेदार द्वारा की गई अपील को जिला न्यायालय ने खारिज कर दिया था। जब मामला द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय पहुंचा, तो किरायेदार द्वारा सि.प्र.सं. के आदेश VI नियम 17 के तहत आवेदन दायर किया गया था जिसमें लिखित बयान में संशोधन की मांग की गई थी ताकि पश्चात्वर्ती घटना की अभिवाक की जा सके कि अन्य किरायेदार फर्म अर्थात् मैसर्स गोरलदास परमानंद ने इमारत के शेष हिस्से को खाली कर दिया था और यदि उस पर विचार किया जाय, तो मकान मालिक बेदखली आदेश का हकदार नहीं होगा। उस आवेदन को उच्च न्यायालय ने देरी के आधार पर खारिज कर दिया था क्योंकि उक्त किरायेदार फर्म ने तीन साल से अधिक समय पहले खाली कर दिया था। उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील खारिज कर दी और मामला उच्चतम न्यायालय में गया। उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी की कि चूंकि मूल रूप से दायर लिखित बयान में, किरायेदार ने पहले ही डिक्री के निष्पादन के द्वारा

उक्त किरायेदार फर्म को बेदखल करने का अभिवाक किया था, इसलिए दूसरी अपील के चरण में किरायेदार द्वारा मांगा गया संशोधन केवल यह बताने के लिए था कि पहले ही क्या कहा गया था और यहां तक कि मकान मालिक के अभिवचनों से भी यह स्पष्ट था कि उक्त किरायेदार फर्म द्वारा पहले से ही विषयगत परिसर से सटे हिस्से को खाली कर दिया गया था, इसलिए उच्च न्यायालय के पास निर्विवाद तथ्य (*वर्तमान मामले के विपरीत*) थे और लिखित बयान में संशोधन के द्वारा इसे अभिलेख पर लिया जाना चाहिए था।

12. ***हसमत राय (पूर्वोक्त***) के मामले में फैसले का महत्वपूर्ण उद्धरण निम्नलिखित है:

> *"14.....म.प्र. अधिनियम मकान मालिक को किरायेदार की बेदखली की मांग करने और धारा 12 में निर्धारित विभिन्न परिस्थितियों में कब्जा प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। यदि किसी मकान मालिक को अपने स्वयं के उपयोग के लिए आवासीय उद्देश्य के लिए परिसर के कब्जे की वास्तविक आवश्यकता है, तो वह वाद कर सकता है और कब्जा प्राप्त कर सकता है। यदि वह अपना व्यवसाय जारी रखना या शुरू करना चाहता है तो वह गैर-आवासीय उद्देश्यों के लिए किराए पर दिए गए परिसर का कब्जा प्राप्त करने का भी उतना ही हकदार है। यदि वह व्यक्तिगत आवश्यकता के आधार पर बेदखली के लिए कार्यवाही शुरू करता है, तो उसे न्यायालय में कार्रवाई शुरू करने की तारीख पर आरोप लगाने और आवश्यकता दिखाने में सक्षम होना चाहिए जो उसका वाद हेतुक होगा। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। यह आवश्यकता मुकदमे की प्रगति के दौरान जारी*

रहनी चाहिए और डिक्री की तारीख पर मौजूद होनी चाहिए और जब हम डिक्री कहते हैं तो हमारा मतलब अंतिम न्यायालय की डिक्री से है। कोई अन्य दृष्टिकोण किराया प्रतिबंध अधिनियम जैसे कल्याणकारी कानून के लाभकारी प्रावधानों को विफल करेगा। यदि मकान मालिक कार्रवाई शुरू होने पर अपनी आवश्यकता दिखाने में सक्षम है और आवश्यकता विचारण न्यायालय की डिक्री की तारीख तक जारी रहती है और उसके बाद किरायेदार द्वारा अपील के लंबित रहने के दौरान यदि मकान मालिक अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त परिसर पर कब्ज़ा कर लेता है, तो उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण पर, किरायेदार को यह दिखाने में सक्षम होना चाहिए कि पश्चात्वर्ती घटनाओं ने वादी को अयोग्य घोषित कर दिया, केवल इस आधार पर कि यहां किरायेदार है जिसके खिलाफ बेदखली के लिए डिक्री या आदेश पारित किया गया है और पश्चात्वर्ती घटनाओं पर ध्यान देने के लिए कोई अतिरिक्त सबूत स्वीकार्य नहीं था। ***जब डिक्री या आदेश के खिलाफ अपील का क़ानूनी अधिकार प्रदान किया जाता है और एक बार अधिकार के प्रयोग में अपील की जाती है, तो डिक्री या आदेश अंतिम नहीं रह जाता है। "किरायेदार" की परिभाषा अपने प्रभाव से उस व्यक्ति को बाहर रखती है जिसके विरुद्ध बेदखली का डिक्री या आदेश दिया गया है और डिक्री या आदेश इस अर्थ में अंतिम हो गया है कि यह न्यायालय या न्यायालयों के अधिक्रम द्वारा आगे न्यायनिर्णयन के लिए अनिर्णीत नहीं है। अपील वाद की निरंतरता है। इसलिए, किरायेदार, जिसके खिलाफ विचारण न्यायालय द्वारा बेदखली के लिए डिक्री पारित की गई है, अगर वह अपील दायर करता है तो सुरक्षा नहीं खोता है क्योंकि अगर अपील की अनुमति दी जाती है तो क़ानूनी संरक्षण की छत्र उसे ढाल देती है। इसलिए यह निर्विवाद है कि किरायेदार की परिभाषा में संदर्भित बेदखली के लिए***

> ***डिक्री या आदेश का अर्थ अंतिम डिक्री या बेदखली का अंतिम आदेश होना चाहिए। एक बार जब डिक्री या बेदखली के आदेश के खिलाफ अपील की जाती है, तो अपील वाद की निरंतरता होने के कारण, मकान मालिक की आवश्यकता को अपील चरण में दिखाया जाना चाहिए।*** *यदि किरायेदार यह दिखाने की स्थिति में है कि पश्चात्वर्ती घटनाओं के कारण आवश्यकता या जरुरत मौजूद नहीं है, तो यह उसके लिए ऐसी घटनाओं को इंगित करने के लिए खुला होगा और अपील न्यायालय सहित न्यायालय को इसकी जांच, मूल्यांकन और न्यायनिर्णयन करना होगा।*
>
> *(हाइलाइट किया गया जोर मेरा है)*

13. जाहिर है, ***हस्मत राय*** की इतरोक्ति एम.पी. अधिनियम की पृष्ठभूमि में आया था, जिसमें दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के अध्याय IIIक के सदृश कोई अध्याय नहीं था। एम.पी. अधिनियम में मकान मालिक की व्यक्तिगत आवश्यकता के मामलों में बेदखली आदेशों के खिलाफ अपीली और यहां तक कि दूसरी अपीली जांच के द्वारा उपाय का विशेष रूप से प्रावधान किया गया था। इसके विपरीत, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के प्रावधान ऐसे आदेशों के खिलाफ विशेष रूप से अपीली जांच को रोकते हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यहां तक कि दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक उच्च न्यायालय द्वारा इस तरह के आदेशों की जांच केवल यह सुनिश्चित करने की सीमित सीमा तक निर्धारित

करती है कि आक्षेपित बेदखली आदेश कानून के अनुसार पारित किया गया था और ऐसा करते समय, उच्च न्यायालय तथ्यों के सवालों में नहीं पड़ सकता है।

14. यदि अन्य किराया नियंत्रण विधानों से संबंधित न्यायिक उदाहरणों के निर्णयाधार दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत मामलों में लिया किया जाता है, तो इससे विसंगतिपूर्ण स्थितियां पैदा होंगी। सामान्य नियम के रूप में ***हसमत राय*** की इतरोक्ति का पालन करते हुए, यदि दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत विवादों से उत्पन्न मामलों में पश्चात्वर्ती घटनाओं को अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत कार्यवाही के दौरान अभिलेख पर लिया जाता है, इसके बाद अंतिम परिणाम पर उन पश्चात्वर्ती तथ्यात्मक घटनाक्रमों के प्रभाव पर विचार-विमर्श किया जाता है, उच्च न्यायालय तथ्यों का विश्लेषण करने का प्रयास करेगा, जो किराया नियंत्रक का एक विशेष क्षेत्र है। यदि पश्चात्वर्ती घटनाओं के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा किराया नियंत्रक के निर्णय को उलट दिया जाता है, तो यह पहले न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के आदेश को अपास्त करेगा, जो दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत तथ्यों का निपटान करने वाला अनन्य और अंतिम प्राधिकारी है; वह भी, आक्षेपित आदेश को अपास्त उन तथ्यों के आधार पर करेगा जो उक्त प्राधिकारी के समक्ष नहीं थे। दूसरी ओर, यदि उच्च न्यायालय पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर लेने के बाद मामले को नए निर्णय के लिए किराया नियंत्रक को भेज देता है, तो इस तरह की कवायद की लगातार

पुनरावृत्ति का कोई अंत नहीं होगा, जिससे दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में अध्याय IIIक को शामिल करने के पीछे के उदात्त सिद्धांतों का घोर हनन होगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत कार्यवाही में, किरायेदार को पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर रखने की अनुमति देने का अर्थ होगा प्रतिवाद करने की अनुमति के लिए आवेदन दायर करने के लिए 15 दिनों की क़ानूनी रूप से निर्धारित समय सीमा को बढ़ाना (*वह भी, बार-बार*), और यह स्पष्ट रूप से विधायी और न्यायिक निर्णयों को निरस्त कर देगा जिसमें 15 दिनों की उक्त अवधि को गैर-विस्तार योग्य अभिनिर्धारित किया गया है।

15. ***हसमत राय*** (पूर्वोक्त) के मामले में, बेदखली का मुकदमा एम.पी. अधिनियम की धारा 12(1)(च) के प्रावधानों के तहत दायर किया गया था, जिसके तहत मकान मालिक को विचारण के द्वारा यह स्थापित करना आवश्यक है कि उसे किराएदार के परिसर पर, जिसे अनावासिक उद्देश्यों के लिए किराए पर दिया गया है, अपना खुद का व्यवसाय जारी रखने या शुरू करने के लिए वास्तव में कब्जा चाहिए और उसके पास संबंधित शहर या कस्बे में उसके कब्जे में कोई अन्य उचित रूप से उपयुक्त अनावासिक आवास नहीं है। मध्य प्रदेश अधिनियम की धारा 12(1)(च) के तहत इन आवश्यकताओं को स्थापित करने का भार पूरी तरह से मकान मालिक पर है, जो किरायेदार द्वारा दायर लिखित बयान के द्वारा निर्धारित प्रतिवाद की पृष्ठभूमि में सविस्तार

विचारण के द्वारा हुआ है। इसके विपरीत, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(4) सहपठित धारा 14(1)(ङ) के तहत, किरायेदार को अधिकार के रूप में बेदखली याचिका का विरोध करने की अनुमति नहीं है, और उसे पहले विरोध करने की अनुमति लेनी होगी। दोनों प्रावधानों के बीच यह अंतर एक महत्वपूर्ण संकेतक है कि इन दो अधिनियमों के तहत बेदखली के मामलों का निपटान करने में न्यायालय का दृष्टिकोण अलग-अलग होना चाहिए, ऐसा न हो कि सेब की तुलना संतरे से की जाए।

16. इसी प्रकार, यहां आवेदनकर्ताओं की ओर से उद्धृत अन्य न्यायिक उदाहरणों में, पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर लेने के मुद्दे को दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के अलावा अन्य किराया नियंत्रण कानूनों से संबंधित था और उन सभी मामलों का फैसला ***हसमत राय*** के इतरोक्ति पर किया गया था जो मुख्य रूप से अपीली जांच से संबंधित था, जो दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के तहत वर्जित है। उन मामलों में से कोई भी विधान से संबंधित नहीं है जो यह तय करने के लिए पूर्व-विचारण चरण को निर्धारित करेगा कि क्या किरायेदार को प्रतिवाद करने की अनुमति दी जानी चाहिए। वे सभी मामले विधानों से संबंधित थे जिनमें बेदखली याचिकाओं/वादों के अनिवार्य विचारण का प्रावधान था।

17. मेरी यह सुविचारित राय है कि दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की समग्र स्कीम ***हसमत राय*** की इतरोक्ति से मेल नहीं खाती है। बेशक, यह नहीं है और न ही कहा जा सकता है कि उपरोक्त उद्धृत न्यायिक उदाहरणों में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत कि मकान मालिक की वास्तविक आवश्यकता तब तक मौजूद रहेगी जब तक कि अंतिम न्यायनिर्णयन की अनदेखी नहीं की जाती। यहां जो कहा जा रहा है वह यह है कि उक्त सिद्धांत का दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की विशेष स्कीम के मद्देनजर इसके तहत कार्यवाही पर लागू नहीं होगा, अन्यथा दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में 1976 के संशोधन का मूल उद्देश्य ही समाप्त हो जाएगा।

18. एक दूसरा पहलू भी है। दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) का परंतुक, सख्ती से कहें, तो उच्च न्यायालय को अभिलेख मांगने और यह जांचने का अधिकार है कि बेदखली आदेश कानून के अनुसार पारित किया गया था या नहीं। यह मुवक्किल को सख्त उपाय प्राप्त करने में सक्षम बनाने वाला प्रावधान नहीं है, सिवाय इसके कि याचिकाकर्ता अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत उच्च न्यायालय का रुख करता है, यह आरोप लगाते हुए कि आक्षेपित आदेश कानून के अनुसार नहीं था और एक बार ऐसा हो जाने के बाद, यह उच्च न्यायालय के लिए है कि वह इस मुद्दे की जांच करे। आक्षेपित आदेश कानून के अनुसार था या नहीं, इस बारे में मूल्यांकन उस सामग्री के आधार पर नहीं किया जा सकता है जो आक्षेपित आदेश पारित करते

समय किराया नियंत्रक के समक्ष नहीं थी। दूसरे शब्दों में, अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय, यह आकलन करने के लिए कि क्या आक्षेपित आदेश विधि के अनुसार है या नहीं, उच्च न्यायालय केवल उस सामग्री तक ही सीमित रहेगा जो आक्षेपित आदेश पारित करने के समय किराया नियंत्रक के समक्ष थी।

19. पुनः, ***हसमत राय*** (पूर्वोक्त) की न्यायिक नजीर में एक विशिष्ट और बहुत महत्वपूर्ण कारक यह था कि वहां प्रश्नगत पश्चात्वर्ती घटना, जिसे उच्चतम न्यायालय ने लिखित बयान में संशोधन के द्वारा रिकॉर्ड पर लाने की अनुमति दी थी, पहले से ही स्वीकृत तथ्य था कि अन्य किरायेदार फर्म अर्थात् मैसर्स गोरलदास परमानंद ने पहले ही इमारत के दूसरे हिस्से को खाली कर दिया था जिसमें किरायेदार परिसर स्थित था। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उच्चतम न्यायालय ने लिखित कथन के संशोधन को केवल एक विस्तृत संशोधन के रूप में देखने की अनुमति दी। वर्तमान मामले में, प्रतिवाद करने की अनुमति के आवेदन के जवाब में, वर्तमान प्रत्यर्थीगण/मकान मालिकों ने किसी भी दुकान को फिर से किराए पर देने से इनकार किया और प्रत्युत्तर में, याचिकाकर्ताओं/किरायेदारों ने फिर से किराए पर लेने की कथित पश्चात्वर्ती घटना को *प्रथम दृष्टया* दिखाने के लिए कोई विश्वसनीय सामग्री नहीं पेश की।

20. ***जयप्रकाश गुप्ता*** (पूर्वोक्त) के मामले पर याचिकाकर्ता/किरायेदार के विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया, जिसमें उच्चतम न्यायालय के समक्ष परिस्थितियां इस प्रकार थीं। मकान मालिक के बेटे के कार्यालय स्थान के लिए वास्तविक आवश्यकता के आधार पर विषयगत दुकान को खाली करने के लिए मेरठ में निर्धारित प्राधिकारी के समक्ष के यू.पी. अधिनियम 1972 की 13 की धारा 21(1)(क) के तहत दायर आवेदन का किरायेदार द्वारा विरोध किया गया था, जिसके बाद विचारण हुआ, जिसमें दुकान को खाली करने के आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया कि मकान मालिक प्रथम तल पर उपलब्ध स्थान पर काबिज है, जिसका उपयोग किया जा सकता है। मकान मालिक ने यू.पी. अधिनियम की धारा 22 के तहत अपील दायर की, जिसे अपर जिला न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करते हुए अनुमति दी कि मकान मालिक के बेटे की व्यावसायिक आवश्यकता को देखते हुए विषयगत दुकान ही उपयुक्त है। अपील आदेश के विरुद्ध किरायेदार ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की। रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, मूल आवेदक, जिसके पुत्र के कार्यालय के लिए विषयगत दुकान की आवश्यकता थी, का निधन हो गया। इसके बाद मृतक आवेदक की पत्नी के साथ-साथ किरायेदार के पिता की भी मौत हो गई। इन परिस्थितियों में, किरायेदार की ओर से एक पूरक शपथ-पत्र और मकान मालिक की ओर से जवाबी शपथ-पत्र उच्च न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था, जिसे अभिलेख पर लिया गया था।

उच्च न्यायालय ने उन पश्चात्वर्ती घटनाक्रमों को देखते हुए अपील न्यायालय के फैसले को अपास्त कर दिया मकान मालिक की वास्तविक आवश्यकता पर इसके प्रभाव पर विचार करने के लिए मामले को अपीलीय अदालत को भेज दिया। उच्च न्यायालय के फैसले को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई थी। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखा, जिसमें कहा गया कि उन पश्चात्वर्ती घटनाओं को सविस्तार विचारण के द्वारा लेने की आवश्यकता है। यह विरोधी दावों की ऐसी स्थिति में है कि उच्चतम न्यायालय ने पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर रखते हुए बरकरार रखा। गौरतलब है कि उच्चतम न्यायालय ने पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर लेने की मंजूरी देते हुए एक शर्त भी जोड़ा कि न्यायालय को पश्चात्वर्ती घटनाओं का "सतर्क संज्ञान" लेना चाहिए।

21. ***अब्दुल गफ्फार*** (पूर्वोक्त) के मामले में निर्णय, जिस पर याचिकाकर्ता/किरायेदार के विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया, वह भी एक अलग तथ्यात्मक और विधिक संदर्भ में था। उक्त मामले में, कर्नाटक किराया नियंत्रण अधिनियम से संबंधित, जिसमें कोई विशेष संक्षिप्त कार्यवाही अध्याय भी शामिल नहीं है, प्रथम न्यायनिर्णयन करने वाला न्यायालय (मुंसिफ) ने बेदखली वाद की अनुमति दी, जिस आदेश को जिला न्यायाधीश ने पुनरीक्षण में उलट दिया और उच्च न्यायालय के समक्ष, कुछ पश्चात्वर्ती घटनाओं का अभिवाक किया गया और पुनरीक्षण कार्यवाही में तथ्यों पर साक्ष्य का

पुनर्मूल्यांकन करने के बाद, उच्च न्यायालय ने मुंसिफ के आदेश को बहाल कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को यह कहते हुए अपास्त कर दिया कि उच्च न्यायालय को तथ्यों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं है। दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत वर्तमान मामले में भी, यह न्यायालय पुनरीक्षण शक्तियों के समान शक्तियों का प्रयोग करते हुए इस बात की जांच करके तथ्यों के निष्कर्षों का पुनर्मूल्यांकन करने में सक्षम नहीं होगा कि क्या घटनाएँ जिसके अभिवाक की मांग अब की जा रही है, प्रासंगिक है या नहीं, और यदि हां, तो प्रतिवाद करने के लिए अनुमति देने के प्रश्न की जांच करते समय किस हद तक।

22. ***मोहन लाल*** (पूर्वोक्त) के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ का निर्णय, जिस पर याचिकाकर्ता/किरायेदार के विद्वान अधिवक्ता ने भरोसा किया था, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख और दिल्ली एवं अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 35 के बीच अंतर को स्पष्ट करता है, जिसमें कहा गया है कि दिल्ली एवं अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत संशोधन की शक्ति केवल तभी उपलब्ध थी जब एक पक्ष ने अपीली उपाय समाप्त कर लिया था, जबकि दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम नामित मामलों की श्रेणी में स्पष्ट रूप से अपील का अधिकार छीन लिया गया है।

23. ***कुलदीप सिंह बनाम संजय अग्रवाल,*** (2018):डीएचसी:2429 मामला, जिस पर भी याचिकाकर्ता/किरायेदार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया, परिस्थितियां वर्तमान मामले से काफी अलग थीं। उक्त मामले में अभिलेख पर लाई जाने वाली पश्चात्वर्ती घटना एक स्वीकृत तथ्य थी कि बेदखली आदेश के बाद मकान मालिक ने वाद संपत्ति बेच दी थी। यह देखते हुए कि जिस संपत्ति को मकान मालिक ने बेदखल करने की मांग की थी, वह अब उसके नियंत्रण में नहीं है, इसलिए बेदखली याचिका का आधार ही समाप्त हो गया है, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने उक्त पश्चात्वर्ती घटना को ध्यान में रखा। जैसा कि इसके बाद चर्चा की गई है, वर्तमान स्थिति नहीं है। उल्लेखनीय है कि ***धरम पाल गुप्ता*** (पूर्वोक्त) के मामले में इस न्यायालय की एक अन्य समन्वय पीठ के फैसले को पूर्व में विपरीत दृष्टिकोण लेते हुए पारित किया गया था *(जिस दृष्टिकोण को विशेष अनुमति याचिका को खारिज करके बरकरार रखा गया था)* जिसे ***कुलदीप सिंह*** (पूर्वोक्त) के मामले में बहस के समय विद्वान एकल न्यायाधीश के ध्यान में नहीं लाया गया था।

24. ***एम.एम. कासिम*** (पूर्वोक्त) के मामले में, जैसा कि ऊपर भी उद्धृत किया गया है, बिहार भवन (पट्टा, किराया और बेदखली) नियंत्रण अधिनियम के तहत, स्वीकार्य तथ्यात्मक स्थिति यह थी कि मकान मालिक ने अपील के लंबित रहने के दौरान इमारत में पूरी तरह से अपना हित खो दिया था, इसलिए सवाल यह था कि क्या वह अभी भी अपने हित की समाप्ति के बाद कार्रवाई

को बनाए रखने और जारी रखने का हकदार होगा। उस स्तर पर, कुछ तथ्यों की जांच के लिए प्रथम अपील न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय में रिमांड पर सवाल उठाने वाले मकान मालिक के कहने पर पुनरीक्षण याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही लंबित थी और पुनरीक्षण कार्यवाही के दौरान ही पश्चात्वर्ती घटना को उच्च न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था।

25. ***भावनगर विश्वविद्यालय बनाम पालिताना शुगर मिल (प्रा.) लिमिटेड***, **(2003) 2** एस.सी.सी. 111; ***भारत संघ बनाम धनवंती देवी,*** (1996) 6 एस.सी.सी. 44; ***भारत फोर्ज कंपनी लिमिटेड बनाम उत्तम मनोहर नाकाटे***, (2005) 2 एस.सी.सी. 489 और ***पंजाब नेशनल बैंक बनाम आर.एल. वैद,*** (2004) 7 एस.सी.सी. 698 के मामलों में उच्चतम न्यायालय ने न्यायिक उदाहरण के सिद्धांत पर विस्तार से बताया और यह अभिनिर्धारित किया कि निर्णय इस बात का नजीर है कि न्यायनिर्णयन के लिए जो था उससे तार्किक रूप से क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है या अनुमान लगाया जा सकता है। उस सिद्धांत को लागू करते हुए, ***हसमत राय*** (पूर्वोक्त) के मामले में न्यायनिर्णयन के लिए जो था वह वर्तमान मामलों में न्यायनिर्णयन के लिए से अलग था, अंतर लागू विधानों की समग्र स्कीमों के बारे में ऊपर विस्तृत रूप से बताया गया है।

26. इस मुद्दे पर जमीनी वास्तविकताओं पर भी ध्यान देना आवश्यक होगा। दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष लगभग सभी कार्यवाही में, आक्षेपित बेदखली आदेशों के संचालन पर रोक प्राप्त करने के बाद *(जो स्थगन मुख्य रूप से बहुत अधिक दस्तावेजों के कारण ऐसी याचिकाओं की सुनवाई और निर्णय लेने में लगने वाले लंबे समय को ध्यान में रखते हुए दी जाती है)*, किरायेदार ऐसे आवेदनों के साथ आते हैं जो पश्चात्वर्ती घटनाओं को अभिलेख पर रखने की मांग करते हैं। ऐसी पश्चात्वर्ती घटनाएं मकान मालिक अथवा उसके परिवार के सदस्यों की मृत्यु, अतिरिक्त आवास की उपलब्धता, मकान मालिक के व्यवसाय में परिवर्तन के परिणामस्वरूप उसकी आवश्यकता में परिवर्तन, मकान मालिक की अन्य खाली संपत्तियों का विक्रय अथवा फिर से किराए पर देना आदि के रूप में हो सकती हैं। दूसरी ओर, इस तरह की पुनरीक्षण याचिकाओं के शीघ्र निपटान के प्रयोजनों के लिए मकान मालिक शायद ही कभी इस तरह के किसी भी आवेदन के साथ आते हैं, इस तथ्य के बावजूद कि किरायेदार की परिस्थितियों में भी समय के साथ महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाते हैं। जिन मकान मालिकों ने सफलतापूर्वक बेदखली के आदेश प्राप्त किए हैं, वह भी विधायिका द्वारा दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में अध्याय IIIक के द्वारा सम्मिलित संक्षिप्त प्रक्रिया की निर्दिष्ट श्रेणियों के तहत, उनकी वास्तविक आवश्यकता की जांच के अंतहीन दौर से पीड़ित होने की उम्मीद नहीं की जा सकती है क्योंकि

जीवन स्थिर नहीं रहता है और न्यायालय दायर होने के बाद भी ऐसी याचिकाओं का शीघ्रता से निपटान करने में असमर्थ हैं।

27. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर वापस आते हुए, जो परिसर इन छह याचिकाओं की विषय-वस्तु हैं, वे भवन के भूतल पर स्थित छह दुकानें हैं; बेदखली याचिकाओं में विस्तृत रूप से अभिवाक किया गया है कि वास्तविक आवश्यकता यह है कि प्रत्यर्थीगण/मकान मालिकों के कब्जे में जगह की कमी है जिसके कारण उन्हें सामान दुकानों के बाहर गलियारों में रखना पड़ता है और यह कि माल को गुणवत्ता, दर, वजन, सामग्री संरचना के अनुसार इसे वर्गीकृत/अलग-अलग करके संग्रहीत किया जाना है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जलरोधक के कैनवास के 4000 बंडल हैं जिन्हें सुरक्षित लादने/उतारने के लिए ट्रक द्वारा पहुंचने योग्य मुख्य सड़क के पास के दुकान में संग्रहीत किया जाना है। याचिकाकर्ताओं/किरायेदारों ने अलग-अलग तारीखों पर दायर इन 12 आवेदनों के द्वारा अभिलेख पर लाने की मांग की है कि इन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान बड़े परिसर की 150 में से 09 दुकानें खाली हो गई थीं और नए किरायेदारों को इसमें रखा गया था। याचिकाकर्ताओं/किरायेदारों के अनुसार, उक्त 09 दुकानों को खाली करने और फिर से किराए पर देने के तथ्यों से पता चलता है कि प्रत्यर्थीगण/मकान मालिकों की आवश्यकता समाप्त हो गई है।

28. ऐसी स्थितियों से निपटते समय कोई भी व्यावहारिक वास्तविकताओं से अनजान नहीं हो सकता। याचिकाकर्ताओं/किरायेदारों के अनुसार, उक्त बड़े परिसर में लगभग 150 दुकानें हैं और प्रत्यर्थीगण/मकान मालिकों के अनुसार, प्रमुख आवश्यकता विषयगत परिसर के स्थान का है ताकि कैनवास को लादने/उतारने के लिए और सामग्री के पृथक्करण के लिए भी आसानी से सुलभ हो। ऐसी स्थिति में, मकान मालिक से यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि वह मुकदमेबाजी के तहत दुकानों को खाली करने की प्रतीक्षा करता रहे, जिससे पहले से खाली पड़ी दुकानों को अप्रयुक्त छोड़ दिया जाए, जिससे वित्तीय नुकसान उठाना पड़े। ऐसी परिस्थिति में, केवल इसलिए कि मकान मालिक, जिसके पास पुरे बड़े परिसर के उपयोग के लिए व्यापक योजनाएं हैं, भले ही मान लिया जाए कि वह नुकसान को कम करने के लिए 150 दुकानों में से 09 में किरायेदारों को पुनः रख ले, यह नहीं कहा जा सकता है कि अधिनियम की धारा 25ख(8) के परंतुक के तहत कार्यवाही के चरण में लंबित बेदखली के दावे का आधार ही खत्म हो जाएगा। वर्तमान प्रत्यर्थीगण/मकान मालिक केवल इसलिए अनुपयुक्त नहीं हो सकते क्योंकि इन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान, 150 दुकानों में से 09 दुकानें, भले ही यह मान ली गई हों, खाली कर दी गई थीं और फिर से किराए पर दी गई थीं। उस दृष्टिकोण से भी, कथित पश्चात्वर्ती घटनाएं इस स्तर पर प्रासंगिक नहीं होंगी।

29. निष्कर्षतः, मेरे सुविचारित राय में, ***हसमत राय*** की इतरोक्ति को दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत कार्यवाही पर लागू नहीं किया जा सकता है और वर्तमान मामले के बारे में विशेष रूप से बोलते हुए, कथित पश्चात्वर्ती घटनाओं का दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 14(1)(ङ) के तहत प्रत्यर्थी/मकान मालिकों द्वारा लाई गई बेदखली कार्यवाही पर कोई असर नहीं पड़ता है।

30. इसलिए, इन सभी 12 आवेदनों को 10,000/- रुपये की कुल जुर्माना के साथ खारिज किया जाता है, जिसका भुगतान आवेदनकर्ताओं द्वारा अनावेदकों को सुनवाई की अगली तारीख तक किया जाएगा।

कि.नि.पु. 160/2018, **कि.नि.पु**. 180/2018, **कि.नि.पु**. 569/2018, **कि.नि.पु**. 570/2018, **कि.नि.पु**. 571/2018 & **कि.नि.पु**. 572/2018

अंतिम बहस के लिए इन याचिकाओं को 26.04.2024 को सूचीबद्ध करें।

गिरीश कठपालिया
(न्यायाधीश)

12 मार्च, 2024/आर.वाई.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*